बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 5

खत्म हो बहस

रिजर्व बैंक ने सोमवार को अपनी अब तक की सबसे लंबी बोर्ड बैठक में यह तय किया कि वह चालू वित्त वर्ष में 28,000 करोड़ रुपये का अंतरिम लाभांश सरकार को हस्तांतरित करेगा। वर्ष 2017-18 के 40,000 करोड़ रुपये के अंतिम अधिशेष (केंद्रीय बैंक जुलाई-जून चक्र का अनुसरण करता है), जो पहली छमाही में केंद्र को मिला, उसे शामिल किया जाए तो आरबीआई द्वारा वर्ष 2018-19 में केंद्र को हस्तांतरित राशि 68,000 करोड़ रुपये हो गई। यह वर्ष 2017-18 में आरबीआई द्वारा केंद्र को दी गई 50,000 करोड़ रुपये की राशि से अधिक है। आरबीआई की ओर से सरकार को लाभांश सौंपे जाने का मामला पिछले काफी समय से विवाद और चर्चा का विषय बना हुआ है।

सरकार आक्रामक ढंग से ज्यादा से ज्यादा राशि की मांग करती रही है। इसके लिए अनुमान से कम राजस्व संग्रह (खासतौर पर जीएसटी आने के कारण) तथा सरकारी बैंकों के पुनर्पूंजीकरण की जरूरत जैसी तमाम वजहों को जिम्मेदार बताया जाता रहा है। इस संदर्भ में अंतरिम लाभांश निश्चित तौर पर सरकार के लिए एक बड़ी राहत लेकर आएगा क्योंकि इसकी मदद से उसे चालू वित्त वर्ष में 3.4 फीसदी राजस्व घाटे का अपना तय लक्ष्य हासिल करने में मदद मिलेगी। यह बात स्पष्ट है कि सरकार आरबीआई की उदारता और दानशीलता पर निर्भर रही है। उदाहरण के लिए इस माह के आरंभ में पेश किए गए अंतरिम बजट में वित्त मंत्री ने आरबीआई की ओर से राष्ट्रीयकृत बैंकों और वित्तीय संस्थानों को जारी किए जाने वाले लाभांश में संशोधन किया और वित्त वर्ष 2019 के लिए उसे 54,817 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 74,140 करोड़ रुपये कर दिया गया। अगले वित्त वर्ष के लिए सरकार 69,000 करोड़ रुपये का राजस्व केंद्रीय बैंक से चाहती है। यह केंद्र द्वारा आरबीआई, सरकारी बैंकों और वित्तीय संस्थानों से निर्धारित 82,911 करोड़ रुपये के राजस्व का 83 फीसदी है।

आरबीआई की ओर से इस वर्ष उदारतापूर्वक दी गई राशि को देखें तो ऐसा लगता नहीं कि उसे इसमें कोई समस्या है। हालांकि अंतरिम लाभांश सरकार को देने की प्रक्रिया आरबीआई के पिछले गवर्नर ऊर्जित पटेल के कार्यकाल में शुरू हुई जिन्होंने गत वर्ष 10,000 करोड़ रुपये इस मद में दिए थे। परंतु यह मुद्दा केंद्र सरकार और आरबीआई के बीच बड़े विवाद का विषय भी बन गया। आरबीआई ने उस वक्त यह दलील दी थी कि हर वर्ष अधिशेष राजस्व का बड़ा हिस्सा ब्याज से होने वाली आय और मुद्रा जारी करने से होने वाले लाभ के कारण जमा होता है और उसे आपातकालीन फंड के रूप में रहने देना चाहिए ताकि अर्थव्यवस्था में वित्तीय स्थिरता बरकरार रखने के लिए जरूरत पड़ने पर उसका इस्तेमाल किया जा सके। परंतु सरकार की चिंताएं कहीं अधिक तात्कालिक रही हैं। यही वजह थी कि दोनों के बीच विवाद उत्पन्न हो गया।

आरबीआई ने अंतरिम भुगतान को लेकर जो हालिया उदारता दिखाई है, उम्मीद की जानी चाहिए कि उस पर उठे सवाल विशेष सामिति की अगले माह आने वाली रिपोर्ट के बाद खत्म हो जाएंगे। समिति की अध्यक्षता पूर्व गवर्नर विमल जालान को सौंपी गई है। समिति आर्थिक पूंजीगत ढांचे की समीक्षा करेगी और यह सुझाव देगी कि केंद्रीय बैंक को पूंजी भंडार का प्रबंधन कैसे करना चाहिए और वह अपना अधिशेष सरकार को हस्तांतरित कर सकती है या नहीं। उम्मीद यह भी है कि समिति आरबीआई द्वारा जोखिम की प्रोविजनिंग के स्तर के मामले में भी अपनी राय देगी। अधिशेष भंडार से जुड़े तमाम मसले समिति के दायरे में रहेंगे। सरकार को समिति की अनुशंसाओं पर शीघ्र कदम उठाना होगा ताकि इस बहस पर विराम लग सके कि आरबीआई को कितना लाभांश सरकार के साझा करना चाहिए।

अजय मोहंती

युवा बेरोजगारी का दंश और जनांकिकी लाभांश

युवाओं के रोजगार को देखें तो हमें पता चलता है कि बहुत बड़ी संख्या में लोग स्वरोजगार को अपनाए हुए हैं। इस संबंध में विस्तार से जानकारी दे रही हैं राधिका कपूर

देश इस समय रोजगार के गंभीर संकट से दो चार है। इस समाचार पत्र द्वारा हाल ही में पीरियॉडिक लेबर फोर्स सर्वे यानी पीएलएफएस (2017-18) के हवाले से एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई जिसमें बताया गया कि देश में रोजगार का संकट कितना विकराल हो चुका है। प्रच्छन्न बेरोजगारी हमारी अर्थव्यवस्था की विशेषता रही है। करीब 6 फीसदी की बेरोजगारी दर काफी कुछ कहती है। चेतावनी की बात यह है कि उच्च बेरोजगारी काफी हद तक युवाओं यानी 15 से 29 की उम्र के युवाओं की बेरोजगारी से जुड़ी हुई है।

युवाओं में बेरोजगारी की दर ग्रामीण पुरुषों और महिलाओं में क्रमश: 17.4 फीसदी और 13.6 फीसदी रही। शहरी युवाओं में पुरुषों और महिलाओं के लिए यह क्रमश: 18.7 फीसदी और 27.2 फीसदी थी। मोदी सरकार जब सत्ता में आई थी तो इसमें युवाओं को रोजगार देने के वादे और इस पर उन्हें मिले समर्थन की अहम भूमिका रही। ऐसे में सरकार के लिए हालिया आंकड़ों को स्वीकार करना असहज करने वाली बात है। परंतु यह केवल एक चुनावी मुद्दा नहीं है। इसका संबंध देश के गंवाए जाते जनांकिकी लाभ से भी है जबकि ऐसा अवसर किसी देश के समक्ष यदाकदा ही आता है।

किसी भी देश में जब कामगार आबादी की वृद्धि कुल आबादी से तेज होती है तो कहा जाता है कि उसके पास जनांकिकी लाभ का अवसर है। माना जाता है कि इससे आय बढ़ेगी, बचत बढ़ेगी, प्रति कामगार अधिक पूंजी आएगी और एक किस्म का जनांकिकी लाभ अर्जित होगा। फिलहाल भारत दुनिया में सबसे अधिक युवा आबादी वाला देश है। आबादी का 65 फीसदी से अधिक हिस्सा 15 से 59 की उम्र का है।

वर्ष 2035-40 तक इस संख्या में इजाफा होने की उम्मीद है। यानी भारत के पास जनांकिकी लाभ लेने का अवसर अन्य किसी देश से अधिक है। अगर हमें इस अवसर का लाभ उठाना है तो हमें अतिरिक्त श्रम शक्ति को उपयोगी रोजगार देने होंगे। परंतु युवा बेरोजगारी की बढ़ती दर इसे निराशाजनक बना रही है।

श्रम ब्यूरो ने 2015-16 में आखिरी बार रोजगार और बेरोजगारी का जो पारिवारिक सर्वे किया था उसके द्वारा जारी आखिरी आंकड़े हमें कहीं अधिक बेहतर विश्लेषण करने की इजाजत देते हैं और इस बात की पुष्टि करते हैं कि युवाओं के बीच बेरोजगारी पिछले काफी समय से बढ़ रही है। मैं 2017-18 के पीएलएफएस और श्रम ब्यूरो के 2015-16 के आंकड़ों की तुलना नहीं करूंगी क्योंकि उनमें घरों के चयन के मानक अलग-अलग थे। परंतु फिर भी श्रम ब्यूरो के सर्वेक्षण से यह संकेत मिलता है कि युवा बेरोजगारी के सामने कठिन चुनौतियां हैं।

वर्ष 2015-16 के सर्वेक्षण में बेरोजगारी की दर 3.7 फीसदी थी जबकि 15 से 29 वर्ष की उम्र के युवाओं के लिए यह दर 10.3 फीसदी थी। श्रम ब्यूरो के सर्वेक्षण के आंकड़े बताते हैं कि 30 से 59 की उम्र के लोगों के लिए रोजगार की दर बमुश्किल 1 फीसदी रह गई।

श्रम ब्यूरो के 2015-16 के सर्वेक्षण में शैक्षणिक स्तर के आधार पर बेरोजगारी का विश्लेषण और अधिक परेशान करने वाले नतीजे पेश करता है। श्रम ब्यूरो के सर्वेक्षण के आंकड़े बताते हैं कि शैक्षणिक स्तर के साथ बेरोजगारी दर में इजाफा होता है। स्नातक और स्नातकोत्तर डिग्री वालों में बेरोजगारी की दर तकरीबन 30 फीसदी थी। इससे पता चलता है कि पढ़े लिखे लोगों के लिए अपने कौशल और योग्यता के अनुसार रोजगार हासिल करना कितना मुश्किल काम है।

दूसरी ओर अशिक्षित लोगों के लिए बेरोजगारी दर केवल 2.7 फीसदी रही। यह कमतर आंकड़ा बहुत आश्वस्त नहीं करता। यह केवल इस वजह से है कि अशिक्षित युवा अक्सर लंबे समय तक बेरोजगार रहने की स्थिति में नहीं रह सकते।

युवाओं के बीच रोजगार की प्रकृति की बात करें तो स्वरोजगार प्राप्त युवाओं की हिस्सेदारी में भी भारी विसंगति नजर आती है। एकबार फिर 2015-16 के आंकड़े दिखाते हैं कि ये पारिवारिक श्रमिक हैं जिनको किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है। रोजगारशुदा लोगों की अगली बड़ी श्रेणी यदाकदा काम करने वालों की है जो 36.64 फीसदी हैं। नियमित वेतनभोगी कर्मचारियों की हिस्सेदारी 17.13 फीसदी के साथ अपेक्षाकृत कम है जो बताती है कि युवाओं के लिए अच्छे उत्पादक काम कितने कम हैं। इसके अलावा वर्ष 2015-16 में 40 प्रतिशत से अधिक युवा कृषि कार्यों में लगे हुए थे जबकि मात्र 13 फीसदी युवा ही विनिर्माण क्षेत्र में संलग्न थे। शैक्षणिक स्तर में सुधार के बावजूद बड़ी तादाद में युवाओं का कृषि कार्यों में लगे रहना यह बताता है कि गैर कृषि क्षेत्र उनके लिए जरूरत के मुताबिक रोजगार के उपयुक्त अवसर तैयार करने में नाकामी हासिल हुई है।

करियर के उठान पर युवाओं को उनके योग्य रोजगार न मिल पाने से न केवल उनमें हताशा उत्पन्न होती है, बल्कि इसका उनके करियर पर काफी गहरा असर होता है। इतना ही नहीं यह बात भविष्य में उनके बेरोजगार रहने की आशंका को भी काफी मजबूत कर देती है।

युवाओं की बेरोजगारी की समस्या से निपटने का कोई जादुई उपाय नहीं है। कई लोग कहते हैं शिक्षा और कौशल विकास क्षेत्र में सुधार करने से बात बन सकती है। इसके अलावा उद्यमिता पर जोर देने और श्रम शक्ति में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने की बात भी कुछ ऐसी ही है। परंतु इन कामों में से कोई भी तभी सफल साबित हो सकती है कि उसका क्रियान्वयन समग्र आर्थिक नीति के संदर्भ में किया जाए ताकि रोजगार की तादाद अधिकतम की जा सके न कि केवल जीडीपी में इजाफा हो।

यकीनी तौर पर यह अपने आप में एक पहेली है कि हमारा देश 7 फीसदी की दर से वृद्धि हासिल कर रहा है लेकिन इसके बावजूद हमारे यहां शिक्षित युवाओं के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर तैयार नहीं हो पा रहे हैं। आने वाले महीनों में राजनीतिक बदलाव संभव है लेकिन यह बात आवश्यक है कि देश में युवाओं की बेरोजगारी के मसले से भलीभांति निपटा जाए। ऐसा नहीं है कि इसकी केवल आर्थिक लागत ही मायने रखती है।

युवाओं की बेरोजगारी के सामाजिक प्रभाव बहुत गहरे हो सकते हैं। वर्ष 2011 का अरब उभार हमें यह याद दिलाता है कि मोहभंग की स्थिति वाले बेरोजगार युवाओं की हताशा हमें किस स्थिति में पहुंचा सकती है।

(लेखिका इंडियन काउंसिल फॉर रिसर्च ऑन इंटरनैशनल इकनॉमिक रिलेशंस की वरिष्ठ फेलो हैं। लेख में प्रस्तुत विचार निजी हैं।)

भाजपा को भारी नुकसान से कमजोर सरकार की आशंका

समसामयिक

टीसीए श्रीनिवास-राघवन

कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता ने दो सप्ताह पहले सार्वजनिक तौर पर कहा था कि भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) इस साल होने वाले आम चुनावों में 135 सीटें गंवा सकती है। मुझे कांग्रेस नेता का सीटों के बारे में यह आकलन बेहद सटीक लगा जो संभवत: कांग्रेस के आंतरिक अनुमानों पर आधारित था। हालांकि उन्होंने यह नहीं बताया था कि कांग्रेस इस चुनाव में कितनी सीटें जीतने जा रही है?

अगर कांग्रेस नेता का यह आकलन सही होता है तो भाजपा वर्ष 2014 में जीती गई 282 सीटों से घटकर इस बार 147 पर आ जाएगी। अगर भाजपा की मौजूदा सीट संख्या 268 से तुलना करें तो फिर वह 2019 में 133 पर ही रह सकती है। यह वर्ष 2004 में भाजपा को मिली 138 सीटों के काफी करीब होगा।

इस बीच कांग्रेस को खुद भी यह भरोसा नहीं है कि वह आगामी चुनावों में 125 से अधिक सीटें जीत पाएगी। हालांकि वह आंकड़ा भी वर्ष 2014 में उसे हासिल सीटों का तिगुना होगा। वैसे कांग्रेस के कुछ कम आशावान एवं अधिक वास्तविक अनुमान यही हैं कि वह 100 सीटों के करीब रहेगी। इतनी सीटें भी कांग्रेस को जीत का ऐलान करने और राहुल गांधी को चैंपियन बताने के लिए काफी होंगी।

अगर हम कांग्रेस के सर्वाधिक आशावान अनुमान- भाजपा 133 और कांग्रेस 125, को भी लें तो अगली सरकार बनाने के लिए राष्ट्रपति का निमंत्रण किसे मिलेगा? इस सवाल का तो केवल एक ही जवाब है।

वैसी स्थिति में जो भी प्रधानमंत्री बनेगा, हमें देखना होगा कि कहीं उसकी हालत 1996 में अटल बिहारी वाजपेयी की तरह न हो जाए? वाजपेयी को केवल 13 दिन सत्ता में रहने के बाद ही हटना पड़ा था। अगर भाजपा इस बार 100 से अधिक सीटें गंवाती है तो 1996 का वाकया भी दोहराया जा सकता है।

इस बात की संभावना अधिक लग रही है कि भाजपा और कांग्रेस दोनों की सम्मिलित सीटों की संख्या 280 ही रहती है तो बाकी दलों के पास 264 सीटें चली जाएंगी। पिछले लोकसभा चुनाव में भाजपा और कांग्रेस को मिलाकर 326 सीटें थीं और अन्य दलों के खाते में 218 सीटें ही गई थीं।

ऐसी स्थिति में अगली सरकार की अगुआई जो भी करे, पिछले पांच साल तक बेहद मजबूत सरकार रहने के बाद हमें एक अशक्त या बेहद कमजोर सरकार मिलने जा रही है। ऐसी स्थिति से बचने के लिए जरूरी होगा कि केंद्र में सरकार बनाने वाली किसी भी पार्टी को कम-से-कम 210 सीटें मिलें। ऐसा होने पर ही नई सरकार की बुनियादी कमजोरी काफी हद तक दूर हो पाएगी।

हम 1996, 1998, 1999 और 2004 के उदाहरण देख चुके हैं। इनमें से हरेक सरकार को क्षेत्रीय दलों का बंधक बनना पड़ा था। कांग्रेस ने 2009 के चुनाव में अपने दम पर 206 सीटें जीतकर क्षेत्रीय दलों के चंगुल से काफी हद तक निजात पा ली थी लेकिन उसने शासन के स्तर पर वह मौका गंवा दिया था।

सवाल है कि हम क्या चाहते हैं? भारत में राजनीति केवल दो बातों से ही संबंधित है: 90 फीसदी मसले सामाजिक नीतियों के बारे में होते हैं और केवल 10 फीसदी ही आर्थिक नीतियों से ताल्लुक रखते हैं। इस 90 फीसदी में से भी 90 फीसदी मुद्दे जाति एवं समुदाय से संबंधित होते हैं और बाकी 10 फीसदी मुद्दों में 90 फीसदी मसले मुद्रास्फीति से संबद्ध होते हैं।

यह भी सच है कि भाजपा एवं कांग्रेस दोनों ही अपनी अलग वजहों से जाति को अपना मुख्य वाहक बनाने से परहेज करते रहे हैं। भाजपा ने हिंदू मतदाताओं को एकजुट करने की कोशिश की है और कांग्रेस ने अल्पसंख्यकों को एक सूत्र में बांधने की कोशिश की है। इन दोनों दलों के बीच की यह इकलौती साझा बात है। बुरी बातों के मामले में दोनों एक जैसे ही हैं। अगर कांग्रेस से उसके शीर्ष परिवार को अलग कर दें और भाजपा से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) को हटा दें तो दोनों साथ आ सकते हैं।

इस तरह कांग्रेस ने समुदायों पर ध्यान देना शुरू कर दिया। वर्ष 2015 में आई एंटनी समिति की रिपोर्ट याद कीजिए जिसमें कांग्रेस के मुस्लिमों के पक्ष में अधिक झुक जाने को लेकर आगाह किया गया था। लेकिन कांग्रेस ने महंगाई और जाति के मसले को नजरअंदाज किया है। दूसरी तरफ, भाजपा ने हमेशा ही महंगाई और समुदाय को तवज्जो दी है और जाति को नजरअंदाज किया है।

इसका नतीजा यह हुआ है कि जाति-आधारित दलों के लिए खुला मैदान मिल गया है। अगली लोकसभा में इन दलों को करीब आधी सीटें मिल सकती हैं। ऐसा होना 2019 चुनावों के बारे में वाकई बहुत खराब खबर होगी।

वर्ष 1989 से अब तक का अनुभव यही रहा है कि जब भी केंद्र सरकार की जातिगत राजनीति करने वाले दलों पर अतिशय निर्भरता रही है तो देश में शासन डांवाडोल हो जाता है क्योंकि घरेलू एजेंडा बहुत संकीर्ण मुद्दों से तय होने लगता है। इस बार के चुनाव में अगर भाजपा की सीटों में 80-100 की भी गिरावट आती है तो मुझे डर है कि ऐसी ही हालत पैदा होने वाली है।

लेकिन अगर आप भाजपा के पदाधिकारियों से बात करें तो वे इस नुकसान के 50 सीटें तक ही सीमित रहने की उम्मीद कर रहे हैं। इसके पीछे उनकी दलील है कि पहले अच्छा प्रदर्शन नहीं रहने वाले राज्यों में भाजपा प्रदर्शन सुधारकर नुकसान की भरपाई करने की रणनीति पर चल रही है। लेकिन वह महज एक उम्मीद ही बनकर रह सकती है।

आखिर में, मोदी फैक्टर भले ही कम हुआ है लेकिन खत्म नहीं हुआ है। उस लिहाज से देखें तो 2019 का आम चुनाव मोदी के कामकाज पर एक जनमत संग्रह बन सकता है। अगर ऐसा हो जाता है तो फिर भाजपा अपने सभी आलोचकों को गलत साबित कर सकती है।

कानाफूसी

तुरुप का इक्का

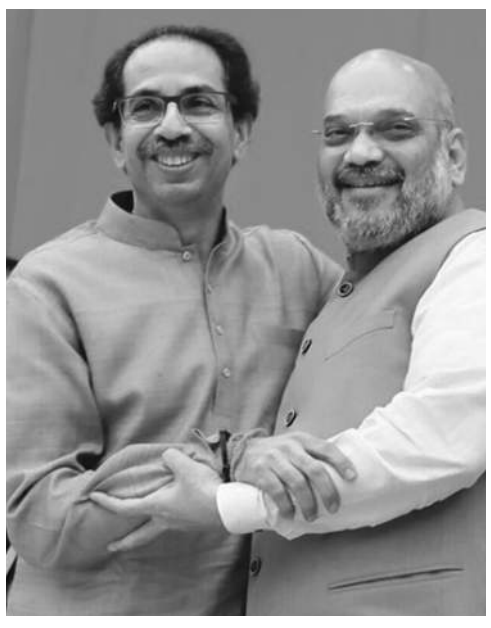

सूत्रों का कहना है कि भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) ने शिवसेना को आगामी लोकसभा चुनाव के दौरान महाराष्ट्र में गठबंधन के लिए राजी करने के लिए अपने तुरुप के इक्के का इस्तेमाल किया। इसकी मदद से ही दोनों दलों के बीच बिगड़ी बात बन सकी। आखिर क्या था वह तुरुप का इक्का? दरअसल सोमवार को जब भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह और शिवसेना प्रमुख उद्धव ठाकरे के बीच मुलाकात हुई तो भाजपा नेतृत्व ने शिवसेना को साफ-साफ यह इशारा कर दिया कि उसके लिए शरद पवार के नेतृत्व वाली राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (राकांपा) और राज ठाकरे के नेतृत्व वाली महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना (मनसे) राजनीतिक रूप से कतई अस्पृश्य नहीं हैं। बस यह बात सुनते ही शिवसेना के कसबल ढीले पड़ गए और पार्टी गठबंधन के लिए चुपचाप तैयार हो गई। भाजपा के एक वरिष्ठ नेता के मुताबिक परदे के पीछे राकांपा और मनसे के समझौते की आशंका ने शिवसेना को झुकाने में अहम भूमिका निभाई। हालांकि इसके अलावा शिवसेना को यह वादा भी किया गया है कि अगर केंद्र में भाजपा की सरकार दोबारा बनती है तो उसे और अधिक मंत्रालय दिए जाएंगे।

आपका पक्ष

महानगरों में बढ़ता ध्वनि प्रदूषण

महानगरों में वायु प्रदूषण के साथ ध्वनि प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। इससे लोगों के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ रहा है। सड़कों पर वाहनों से उत्पन्न होने वाला शोर मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव डालता है। लगातार लाउडस्पीकर बजने से भी परेशानी उत्पन्न होती है। हालांकि लाउडस्पीकर बजाने से संबंधित नियम बनाए गए हैं लेकिन कुछ अवसरों पर कानून की अनदेखी भी की जाती रही है। सड़क किनारे रहने वाले लोगों को अधिक ध्वनि प्रदूषण से जूझना पड़ता है। सड़क पर लगातार चलने वाले वाहनों से उत्पन्न शोर तथा हॉर्न की आवाज दिनभर सुनाई देती रहती है। सबसे अधिक परेशानी चौराहों के पास बने घरों में रहने वाले लोगों को होती है। चौक-चौराहों में वाहन चालक हॉर्न का अधिक इस्तेमाल करते हैं जिससे अधिक शोर उत्पन्न होता है। कई साइलेंट जोन पर भी वाहन चालक हॉर्न का इस्तेमाल कर देते हैं जिससे दूसरे व्यक्ति को

नुकसान होता है। स्कूल तथा अस्पताल के आसपास क्षेत्र को साइलेंट जोन में रखा गया है तथा वहां सड़कों पर हॉर्न पर प्रतिबंध का संकेत चिह्न भी लगाया जाता है। ध्वनि प्रदूषण दिमाग पर असर डालता है जिससे व्यक्ति चिड़चिड़ापन का शिकार हो जाता है। ध्वनि प्रदूषण का एक और मुख्य कारण निर्माण है। निर्माण के दौरान

ध्वनि प्रदूषण पर रोक लगाने के लिए कानून बनाने तथा कड़ाई से पालन करने की जरूरत है

मशीनों तथा मजदूरों द्वारा काम किए जाने से शोर उत्पन्न होता है। इससे आसपास रहने वाले लोगों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। काम करने वाले मजदूरों पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। अदालत ने पटाखों से होने वाले वायु प्रदूषण के कारण इस पर प्रतिबंध लगाया था जो सराहनीय पहल थी। पटाखे से जहरीले धुएं के अलावा शोर भी उत्पन्न होता है। सरकार को वायु प्रदूषण पर नियंत्रण लाने के लिए जगह-जगह पर वाहनों की जांच करनी चाहिए कि वाहनों में प्रतिबंधित हॉर्न तो नहीं लगाए गए हैं। जैसे वाहनों में वायु प्रदूषण प्रमाणपत्र दिया जाता है, वैसे ही ध्वनि प्रदूषण का प्रमाणपत्र भी जरूरी करना चाहिए। हाल में राष्ट्रीय हरित अधिकरण (एनजीटी) ने ध्वनि प्रदूषण संबंधित एक मामले में एनजीटी ने कहा कि कानून का उल्लंघन करने वालों के खिलाफ कार्रवाई करने की जरूरत है। अत: नियमों का कठोरता से पालन ही प्रदूषण कम कर सकता है।

किशोर कुमार, नोएडा

देश में हवाई मार्ग का विस्तार जरूरी

देश में रेल मार्ग, सड़क मार्ग से यात्रा करने में काफी समय लगता है। इसलिए हवाई मार्ग विकसित करना जरूरी हो गया है। हालांकि सरकार की उड़ान योजना इस दिशा में काम कर रही है लेकिन अभी तक इसके सकारात्मक परिणाम नहीं मिले हैं। सरकार की उड़ान योजना की गति भी काफी धीमी है जिससे कई जगहों में अब तक हवाई संपर्क स्थापित नहीं हो पाया है। महानगरों के अलावा छोटे शहरों में भी हवाई यातायात की सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए जिससे लोग कम समय में यात्रा पूरी कर सकें। यह सुनिश्चित करने के लिए सरकार को उचित कदम उठाने की भी जरूरत है कि छोटे शहरों के लोग भी हवाई यात्रा कर सकें। अमेरिका, फ्रांस, ब्रिटेन आदि देशों में हवाई अड्डों की संख्या काफी अधिक है। अत: सरकार को हर जिले तथा छोटे शहरों को हवाई संपर्क से जोड़ने की जरूरत है।

राकेश जैन, सतना

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।